ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-12* January- 2018
Innovation The Research Concept

# शिक्षा समाज व साहित्यः एक चिंतन


## सारांश

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः शिक्षा द्वारा ही मनुष्य का सामाजिक विकास होता है। शिक्षा का उद्देश्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जिसमें कोई किसी का शोषण नहीं करेगा। सब एक दूसरे की उन्नति में सहायक होंगे तथा सबका उदय होगा। शिक्षा समाज में फैली कुरीतियों, कुप्रथाओं और अंधविश्वासों को समाप्त करती है। इस प्रकार शिक्षा सामाजिक नियन्त्रण और परिवर्तन के लिये एक–अंकुश के रूप में कार्य करती है। शिक्षा के सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त अभिक्रम माना जाता है किन्तु साहित्य का भी सामाजिक परिवर्तन में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं उदाहरणतः युद्धों का वर्णन इतिहास की तरह समाचार पत्रों में भी होता है। किसी भी युग के अच्छे साहित्य को पढ़कर उसमें से उस युग विशेष की सभी गतिविधियों का ब्यौरा खोजा जा सकता है। यदि किसी कारणवश गांधी युग का इतिहास नष्ट हो जाए, तो स्वर्गीय प्रेमचन्द के साहित्य को पढ़कर, उस आधार पर पुनर्लेखन सम्भव हो सकता है। कितनी महत्वपूर्ण और तथ्ययुक्त बात है यह । इसी कारण साहित्य को समय का प्रतिबिम्ब कहा जाता है।


**मुख्य शब्द :** भौतिकवादी, आदर्शवादी, प्रयोगवादी, अभिकरण, वैकल्पिक भव्य–दृश्य, प्रतिबिम्ब, परिपेक्ष्य।

**गीता सिरोही**
प्रवक्ता,
शिक्षा शास्त्र विभाग,
राजकीय बालिका इण्टर कॉलेज,
बुलन्दशहर

**प्रस्तावना**

एक व्यक्ति के जीवन में शिक्षा का विशेष महत्व है। इसके अभाव में व्यक्ति का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। आज मनुष्य ने जितनी प्रगति की है। उसका मूल कारण शिक्षा ही है। शिक्षा के द्वारा ही मानव पाश्विक प्रवृत्तियों का शोधन करता है क्योंकि बालक जन्म के समय न तो सामाजिक होता है और न ही समाज विरोधी होता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाकर उसे समाज का श्रेष्ठ नागरिक बनाती है और उसे अपेक्षित परिवर्तन करने की दिशा में उसे प्रेरित करती है। इसीलिए शिक्षा को व्यवहार में परिवर्तन करने की प्रक्रिया के साथ ही समाज में होने वाले परिवर्तनों की आधार शिला भी कहा जा सकता है। अतः समाज का शिक्षा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षा का स्वरूप समाज की आवश्यकताओं के अनुसार निर्मित होता है अथवा समाज ही शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार है। शिक्षा समय–समय पर उस प्रकार बदलती है जिस प्रकार समाज बदलता है।

**शिक्षा समाज व साहित्य**

प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज में धर्म को प्रधानता थी। अतः शिक्षा का स्वरूप धार्मिक था। धार्मिक तथा चारित्रिक विकास पर बल दिया जाता था। किन्तु आधुनिक समाज पर विज्ञान का प्रभाव है। अतः शिक्षा द्वारा व्यक्ति में चिंतन, तर्क एवं निर्णय शक्ति के विकास पर बल दिया जाता है। अब सभी व्यक्तियों को स्वतंत्र रूप से यह निर्णय करने का अधिकार है कि वे किस प्रकार की शिक्षा ग्रहण करें। वर्तमान काल में हमारे सम्मुख समाज के कई रूप विद्यमान हैं।

जैसेः– भौतिकवादी समाज, आर्दशवादी समाज तथा प्रयोगवादी समाज इत्यादि। शिक्षा का स्वरूप भी इन्हीं सामाजिक सिद्धांतो के अनुरूप निर्मित किया जाता है। शिक्षा व समाज के सम्बन्ध पर बल देते हुए 'ओटावे' ने कहा है कि ''शिक्षा सम्पूर्ण समाज की क्रिया है''।

18वीं सदी तक हमारे देश में व्यक्तिवाद का बोलबाला था। लेकिन 19वीं सदी बाल–मनो विकास के अध्ययन पर बल दिये जाने के कारण सामाजिकता वादी प्रवृति का जन्म हुआ। इस प्रवृति के परिणामस्वरूप व्यक्ति को परिवर्तित समाज में रहने हेतू तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया गया। इस सामाजिकता वादी प्रवृति के अनुसार शिक्षा के अर्थ, उददेश्य, पाठयक्रम इत्यादि में परिवर्तन हुए। आज सामाजिक परिवर्तन अत्यन्त तीव्र गति से हो रहे

हैं। इन परिवर्तनों के प्रभाव स्वरूप ही आज विद्यालयों में सामान्य शिक्षा के साथ–साथ तकनीकी शिक्षा भी प्रदान की जा रही है। उदारहणतः हमारे प्रधानमंत्री महोदय श्री मोदी जी ने भी तकनीकी व कौशल शिक्षा को बढ़ावा दिया है। शिक्षा के नित, नये शैक्षिक अभिकरणों पर प्रयोग किया जा रहा है।

आज हम विज्ञान व तकनीकी विकास का शिक्षा पर प्रभाव की चर्चा करें तो यह कहना गलत नहीं होगा कि आज सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली की संरचना एक कारखानें की संरचना के समान हो गयी है। विज्ञान को वैकल्पिक विषय के रूप में लेने वाले छात्रों की तेजी से बढ़ती संख्या, मैडिकल इंजीनियरिंग व पॉलीटेक्नीक आदि शिक्षा संस्थानों का तेजी से खुलना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण को श्रेष्ठ समझा जाना, शिक्षण पद्धत्तियों में वैज्ञानिक श्रव्य–दृश्य उपकरणों के प्रयोग का बढ़ना, टी0वी0 व रेडियों द्वारा शिक्षण आदि इसके प्रमाण है।

शिक्षा के प्रभाव स्वरूप ही भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था में परिवर्तन संयुक्त परिवार का विघटन तथा जाति व्यवस्था में परिवर्तन हुआ है। अन्तर्जातीय विवाह को इसका एक जीवंत उदाहरण माना जा सकता है।

यह कहना गलत ना होगा कि सामाजिक परिवर्तन में सबसे बड़ा योगदान साहित्य का भी रहा है क्योंकि साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है। मानव सभ्यता के विकास में भी साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

विचारों ने साहित्य को जन्म दिया तथा साहित्य ने मानव की विचार धारा को गतिशीलता प्रदान की। उसे सभ्य बनाने का कार्य किया। मानव की विचारधारा में परिवर्तन लाने का कार्य साहित्य द्वारा ही किया जाता है। इतिहास साक्षी है कि समाज में जितने भी परिवर्तन आये वे सब साहित्य के माध्यम से ही आये। साहित्यकार समाज में फैली कुरीतियों, विसंगतियों, विकृतियों, अभावों, विषमताओं आदि के बारे में लिखता है। इनके प्रति जन मानस को जागरूक करने का कार्य करता है। साहित्य जनहित के लिए ही होता है।

मानव को जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन के हर क्षेत्र में समाज की आवश्यकता पड़ती है। मानव समाज का एक अभिन्न अंग है। जीवन में मनुष्य के साथ क्या घटित हो रहा है उसे साहित्यकार शब्दों में रचकर साहित्य की रचना करता है। अर्थात् साहित्यकार जो देखता है, अनुभव करता है, चितंन करता है, विशलेषण करता है, उसे लिख देता है। साहित्य सृजन के लिए विषय वस्तु समाज के ही विभिन्न पक्षों से ली जाती है। साहित्यकार रचना करते समय अपने विचारों और कल्पनाओं को भी सम्मिलित करता है।

श्रेष्ठ साहित्य वही हो सकता है जिसमें युग जीवन व समाज को प्रतिबिम्बित कर पाने व उसका दर्पण बन पाने की क्षमता हो। सत्य तो यह है कि इसी तरह का साहित्य जीवित भी रहता है। कालीदास, माघ, भास, भवभूति, तुलसी, सूर, जायसी, प्रसाद, पंत, निराला व दिनकर जी आदि कवि साहित्यकार और इन सब का साहित्य समय का सफल सार्थक प्रतिबिम्बन और प्रतिनिधित्व करने के कारण ही आज भी जाना जाता है और हमेशा आज ही की तरह जाना जाता रहेगा। समय की उपेक्षा करके कोई भी साहित्य जीवित नहीं रह सकता।

यदि हम वर्तमान परिपेक्ष्य में बात करें तो मीडिया समाज के लिए एक मजबूत कड़ी साबित हो रहा है लेकिन भाषा की दृष्टि से समाचार पत्रों मे गिरावट देखने को मिल रही है। इसका बड़ा कारण है समाचार पत्रों से साहित्य का लुप्त होना। जबकि साहित्य को समृद्ध करने में समाचार पत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। परन्तु समाचार पत्रों ने ही स्वयं को साहित्य से दूर कर लिया है। जो अच्छा संकेत नहीं कहा जा सकता। आज आवश्यकता है कि समाचार पत्रों में साहित्य का समावेश हो और वे अपनी परम्परा को समृद्ध बनाये तथा समाज को एक सत्यता का आईना दिखाने का कार्य करें। आज कल साहित्य मात्र साप्ताहिक छपने वाले सप्लीमेंटस में सिमटकर रह गया है। यदि हम इसके दूसरे पक्ष पर दृष्टि डाले तो यह हमारे लिए एक अति विडंबना का विषय है कि हमारी युवा पीढी भी साहित्य से कोसों दूर है इसका मुख्य कारण मोबाईल व टी0वी0 का अनुचित उपयोग कहा जा सकता है। युवा वर्ग दिग्भ्रमित होकर सत्साहित्य से दूरी बढ़ा चुका है। आवश्यकता है उनके रूख को एक अच्छे साहित्य की ओर बढ़ाने की। यह कार्य शिक्षा, साहित्य व समाज ही मिलकर सरलता से कर सकते हैं क्योंकि शिक्षा साहित्य व समाज तीनों एक दूसरे के पूरक है इसलिए यह अति आवश्यक है कि साहित्य लेखन निरंतर जारी रहना चाहिए अन्यथा समाज का विकास अवरूद्ध हो जायेगा।

**अध्ययन का उद्देश्य**

1. शिक्षा, समाज व साहित्य के परस्पर सम्बन्ध का अध्ययन किया गया है।
2. साथ ही वर्तमान समय में युवा वर्ग की साहित्य में अरूचि का चिन्तन प्रस्तुत किया गया है।
3. सामाजिक परिवर्तन में साहित्य के योगदान की चर्चा।

**निष्कर्ष**

समाज से परे व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं होता है। एक व्यक्ति को सामाजिक व बौद्धिक अस्तित्व को उच्चीकृत करने के लिये शिक्षा व साहित्य के योगदान की महती आवश्यकता होती है। यह कहा जा सकता है कि समाज शिक्षा को जन्म देता है और शिक्षा एक नवीन समाज का निर्माण करके सामाजिक परिवर्तन की ओर उन्मुख करती है और एक सामाजिक व शिक्षित व्यक्ति ही साहित्य की रचना कर सकता है। अतः शिक्षा समाज व साहित्य का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः युवा पीढ़ी को साहित्य की ओर मोड़ने के लिये समाज, विद्यालय और मीडिया को मिलकर सहयोग करना होगा।

**सन्दर्भ गन्थ सूची**

1. *मिश्रा के0के0 (1965), ''विकास का समाजशास्त्र'', वैशाली प्रकाशन, गोरखपुर।*
2. *मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ (1999), सामाजिक विचारधारा, विवके प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली।*
3. *पचौरी गिरीश (2008) 'शिक्षा के सामाजिक आधार' आर0लाल बुक डिपो, मेरठ।*

4. महाजन, संजीव (2008) समाजशास्त्र, राजलक्ष्मी प्रकाशन, मेरठ।
5. शर्मा, डी0डी0 (2008) 'समाजशास्त्र' साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. शर्मा आर0ए0 (2008) ''शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार'', विनय रखेजा प्रकाशन, मेरठ।
5. रस्तोगी ए0के0 (2011) ''श्रेष्ठ हिन्दी निबंध'', कालरा पब्लिकेशन प्रा0लि0, मुखर्जी नगर, नई दिल्ली।
6. रस्तोगी आर0के0 (2012) ''शिक्षा एंव समाज'', संजीव प्रकाशन, मेरठ।
7. जायसवाल, सीताराम, 'शिक्षा का सामाजिक आधार, प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ।